IJCRT.ORG ISSN : 2320-2882

INTERNATIONAL JOURNAL OF CREATIVE RESEARCH THOUGHTS (IJCRT)

An International Open Access, Peer-reviewed, Refereed Journal

सामाजिक समरसता का आदर्श: रहीम का दृष्टिकोण

एम. पार्वती
व्याख्याता (हिंदी)
सिल्वर जुबिली गवर्नमेंट कॉलेज कर्नूल, आंध्र प्रदेश

सार (Abstract)

भारतीय समाज की मूल संरचना विविधताओं पर आधारित रही है, जहाँ जाति, धर्म, भाषा, संस्कृति और वर्ग की भिन्नताएँ स्पष्ट रूप से दिखाई देती हैं। इन विविधताओं के बावजूद सामाजिक जीवन को संतुलित और संगठित बनाए रखने वाली शक्ति सामाजिक समरसता रही है। सामाजिक समरसता का तात्पर्य केवल सह-अस्तित्व से नहीं, बल्कि आपसी सम्मान, सहयोग, सहिष्णुता और मानवीय संवेदनाओं से है। हिंदी साहित्य ने सदैव इस समरसता को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। मध्यकालीन हिंदी साहित्य में रहीम (अब्दुर्रहिम ख़ानख़ाना) ऐसे कवि हैं, जिनका काव्य सामाजिक समरसता के आदर्शों को अत्यंत सहज, सरल और प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करता है।

रहीम का काव्य जीवन के व्यावहारिक अनुभवों से उपजा हुआ है। उन्होंने अपने दोहों में मानव जीवन की जटिलताओं, सामाजिक संबंधों की नाजुकता और नैतिक मूल्यों की आवश्यकता को संक्षिप्त किंतु सारगर्भित रूप में अभिव्यक्त किया है। उनका साहित्य केवल आध्यात्मिक या नैतिक उपदेश तक सीमित नहीं है, बल्कि वह समाज को जोड़ने वाली जीवन-दृष्टि प्रस्तुत करता है। प्रेम, करुणा, दया, विनम्रता, सहिष्णुता और मानव-मूल्य—ये सभी तत्व रहीम के काव्य में सामाजिक समरसता के मूल आधार के रूप में उभरते हैं।

रहीम का दृष्टिकोण विशेष रूप से महत्वपूर्ण इसलिए भी है क्योंकि वे धार्मिक और सांस्कृतिक सीमाओं से ऊपर उठकर मानवता को सर्वोच्च स्थान देते हैं। उनके अनुसार मनुष्य की पहचान उसके कर्म और आचरण से होती है, न कि उसकी सामाजिक या धार्मिक पृष्ठभूमि से। यह मानवतावादी दृष्टि सामाजिक भेदभाव और संघर्ष को समाप्त करने की दिशा में एक सशक्त वैचारिक आधार प्रदान करती है।

वर्तमान समय में जब समाज बढ़ती असहिष्णुता, सामाजिक विभाजन और नैतिक संकट से गुजर रहा है, रहीम के विचार और भी अधिक प्रासंगिक हो जाते हैं। उनके दोहे सामाजिक सौहार्द, आपसी विश्वास और नैतिक संतुलन को पुनः स्थापित करने की क्षमता रखते हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र का उद्देश्य रहीम सतसई में निहित सामाजिक समरसता के आदर्शों का गहन विश्लेषण करना तथा यह स्पष्ट करना है कि रहीम का सामाजिक दृष्टिकोण आज के संदर्भ में भी किस प्रकार सार्थक, उपयोगी और प्रेरणादायक है।

मुख्य शब्द

सामाजिक समरसता, रहीम सतसई, मानवतावाद, करुणा, सहिष्णुता, नैतिक मूल्य, सामाजिक चेतना

1. प्रस्तावना

सामाजिक समरसता किसी भी समाज के स्थायित्व और विकास की अनिवार्य शर्त है। इसका अभाव समाज में तनाव, संघर्ष और विघटन को जन्म देता है। भारतीय समाज प्राचीन काल से ही विविधताओं से युक्त रहा है, जहाँ सामाजिक संतुलन बनाए रखना एक चुनौतीपूर्ण कार्य रहा है। ऐसे समाज में साहित्य ने सदैव मार्गदर्शक की भूमिका निभाई है। साहित्य न केवल समाज का दर्पण होता है, बल्कि वह सामाजिक चेतना को जाग्रत कर सुधार का मार्ग भी प्रशस्त करता है।

हिंदी साहित्य के इतिहास में रहीम एक ऐसे कवि हैं, जिन्होंने सामाजिक जीवन की सूक्ष्म वास्तविकताओं को अत्यंत सरल भाषा में व्यक्त किया है। उनके दोहे जीवन के छोटे-छोटे अनुभवों के माध्यम से बड़े सामाजिक सत्य उद्घाटित करते हैं। रहीम का काव्य न तो केवल दरबारी वैभव का चित्रण करता है और न ही केवल आध्यात्मिक उपदेश देता है; बल्कि वह समाज के प्रत्येक व्यक्ति से संवाद करता है।

रहीम का साहित्य सामाजिक समरसता की दृष्टि से इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि वह मनुष्य को मनुष्य से जोड़ने की प्रेरणा देता है। प्रेम, करुणा और विनम्रता जैसे गुणों को वे सामाजिक जीवन की आधारशिला मानते हैं। उनके अनुसार समाज तभी सुदृढ़ बन सकता है जब व्यक्ति अपने अहंकार और स्वार्थ को त्यागकर सामूहिक हित की भावना को अपनाए।

इसके अतिरिक्त, रहीम का काव्य सामाजिक नैतिकता को व्यवहारिक रूप में प्रस्तुत करता है। उनके दोहे यह सिखाते हैं कि सामाजिक संबंधों में संतुलन, सहनशीलता और संवेदनशीलता कितनी आवश्यक है। इस प्रकार रहीम की रचनाएँ सामाजिक समरसता के अध्ययन के लिए अत्यंत उपयोगी और प्रासंगिक हैं। प्रस्तुत शोध-पत्र इसी दृष्टि से रहीम के काव्य का विश्लेषण करने का प्रयास करता है।

2. रहीम का जीवन परिचय एवं सामाजिक पृष्ठभूमि

अब्दुर्रहिम ख़ानख़ाना, जिन्हें हिंदी साहित्य में 'रहीम' के नाम से जाना जाता है, मुगल सम्राट अकबर के प्रमुख नवरत्नों में से एक थे। उनका जन्म 1556 ई. में हुआ। वे एक कुशल सेनापति, प्रशासक, विद्वान और संवेदनशील कवि थे। फारसी, अरबी, संस्कृत और हिंदी भाषाओं पर उनका समान अधिकार था। हिंदी में ब्रजभाषा के माध्यम से उन्होंने जो दोहे रचे, वे आज भी जनमानस में समान रूप से लोकप्रिय हैं।

रहीम का जीवन वैभव और संघर्ष दोनों का साक्षी रहा। राजनीतिक सत्ता के उतार-चढ़ाव, युद्धों का अनुभव और व्यक्तिगत जीवन की पीड़ाओं ने उनके चिंतन को गहराई प्रदान की। यही कारण है कि उनके काव्य में जीवन का यथार्थ, सामाजिक विषमता और मानवीय संवेदना स्पष्ट रूप से दिखाई देती है।

रहीम की सामाजिक पृष्ठभूमि उन्हें एक व्यापक दृष्टिकोण प्रदान करती है। वे मुस्लिम होकर भी हिंदी में काव्य रचना करते हैं और हिंदू सांस्कृतिक परंपराओं से गहराई से जुड़े दिखाई देते हैं। यह तथ्य स्वयं में सामाजिक समरसता का उदाहरण है। उनके काव्य में धार्मिक कट्टरता के स्थान पर मानवता और नैतिक मूल्यों को प्रधानता दी गई है।

इस प्रकार रहीम का जीवन और सामाजिक अनुभव उनके काव्य के मूल में विद्यमान हैं। उनका साहित्य सामाजिक समरसता, सहिष्णुता और मानवतावाद का सशक्त प्रतिनिधि बनकर उभरता है, जो उन्हें हिंदी साहित्य में एक विशिष्ट स्थान प्रदान करता है।

3. सामाजिक समरसता की अवधारणा

सामाजिक समरसता किसी भी समाज की स्थिरता, एकता और प्रगति का मूल आधार है। इसका तात्पर्य समाज के विभिन्न वर्गों, समुदायों और व्यक्तियों के बीच संतुलन, सौहार्द और सहयोग की भावना से है। सामाजिक समरसता केवल बाहरी शांति या संघर्ष की अनुपस्थिति नहीं है, बल्कि यह आंतरिक रूप से आपसी सम्मान, सहिष्णुता, संवेदनशीलता और नैतिक जिम्मेदारी की भावना को भी समाहित करती है। जहाँ सामाजिक समरसता विद्यमान होती है, वहाँ सामाजिक संबंध मजबूत होते हैं और समाज एक संगठित इकाई के रूप में विकसित होता है।

भारतीय समाज की संरचना विविधताओं पर आधारित रही है। यहाँ जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र और संस्कृति की बहुलता देखने को मिलती है। ऐसी विविधता में समरसता बनाए रखना सदैव एक चुनौतीपूर्ण कार्य रहा है। भारतीय दर्शन और

साहित्य ने इस चुनौती का समाधान 'वसुधैव कुटुम्बकम्' जैसी अवधारणाओं के माध्यम से प्रस्तुत किया है, जिसमें सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार माना गया है। सामाजिक समरसता की यही भावना भारतीय जीवन-दृष्टि की आत्मा रही है।

सामाजिक समरसता का संबंध केवल सामाजिक ढाँचे से नहीं, बल्कि व्यक्ति के नैतिक और मानसिक विकास से भी है। जब व्यक्ति अपने स्वार्थ से ऊपर उठकर समाज के हित के बारे में सोचता है, तभी समरसता संभव हो पाती है। प्रेम, करुणा, दया, सहिष्णुता और सहयोग जैसे गुण सामाजिक समरसता को सुदृढ़ करते हैं। इसके विपरीत अहंकार, स्वार्थ, घृणा और असहिष्णुता समाज को विघटन की ओर ले जाती हैं।

हिंदी साहित्य में सामाजिक समरसता की अवधारणा को संत और भक्त कवियों ने विशेष रूप से प्रस्तुत किया है। इसी परंपरा में रहीम का स्थान अत्यंत महत्वपूर्ण है। रहीम सामाजिक समरसता को केवल वैचारिक स्तर पर नहीं, बल्कि व्यवहारिक जीवन के स्तर पर प्रस्तुत करते हैं। उनके दोहे यह सिखाते हैं कि सामाजिक संबंधों में संतुलन बनाए रखने के लिए व्यक्ति को अपने आचरण में विनम्रता और संवेदनशीलता अपनानी चाहिए।

रहीम की दृष्टि में सामाजिक समरसता तभी संभव है जब समाज के सभी वर्गों के प्रति समान दृष्टि रखी जाए। वे सामाजिक ऊँच-नीच, अहंकार और भेदभाव का विरोध करते हैं। उनके अनुसार समाज में प्रत्येक व्यक्ति का सम्मान होना चाहिए, क्योंकि मानवता ही समाज की सबसे बड़ी पूँजी है। इस प्रकार सामाजिक समरसता की अवधारणा रहीम के काव्य में नैतिकता, मानवता और सामाजिक उत्तरदायित्व के रूप में उभरकर सामने आती है।

अतः यह कहा जा सकता है कि सामाजिक समरसता केवल सामाजिक व्यवस्था का तत्व नहीं, बल्कि एक जीवन-दृष्टि है। रहीम इस जीवन-दृष्टि को अपने दोहों के माध्यम से सरल, प्रभावी और शाश्वत रूप में प्रस्तुत करते हैं, जिससे उनका काव्य आज भी सामाजिक चेतना को जाग्रत करने में सक्षम है।

4. रहीम के काव्य में सामाजिक समरसता के प्रमुख आयाम

4.1 प्रेम का सामाजिक महत्व

रहीम के काव्य में प्रेम सामाजिक समरसता का केन्द्रीय तत्व है। प्रेम मनुष्य को मनुष्य से जोड़ता है और समाज में भावनात्मक एकता स्थापित करता है। रहीम प्रेम को अत्यंत कोमल और संवेदनशील मानते हैं, जिसे संभालकर रखना आवश्यक है।

दोहा: *रहिमन धागा प्रेम का, मत तोड़ो चटकाय। टूटे से फिर ना जुड़े, जुड़े गाँठ पड़ जाय॥*

इस दोहे में प्रेम को धागे के रूप में प्रस्तुत किया गया है, जो समाज के ताने-बाने को जोड़ता है। यदि यह धागा टूट जाता है तो सामाजिक संबंधों में स्थायी दरार पड़ जाती है। इस प्रकार प्रेम सामाजिक समरसता की आधारशिला है।

4.2 करुणा और दया का सामाजिक स्वरूप

करुणा और दया सामाजिक समरसता के नैतिक आधार हैं। रहीम मानते हैं कि दया के बिना समाज कठोर और संवेदनहीन हो जाता है। उनके दोहे व्यक्ति को आत्मकेंद्रित होने से रोकते हैं और दूसरों के दुःख को समझने की प्रेरणा देते हैं।

रहीम के अनुसार दया केवल भावना नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व है। समाज में कमजोर, निर्धन और पीड़ित वर्गों के प्रति संवेदनशील होना ही सच्ची सामाजिक समरसता है। यह दृष्टिकोण सामाजिक समानता और न्याय को सुदृढ़ करता है।

4.3 विनम्रता और अहंकार-निरोध

अहंकार सामाजिक विघटन का प्रमुख कारण है। रहीम अपने दोहों में अहंकार का तीव्र विरोध करते हैं और विनम्रता को श्रेष्ठ मानवीय गुण मानते हैं।

दोहा: *बड़ा हुआ तो क्या हुआ, जैसे पेड़ खजूर। पंथी को छाया नहीं, फल लागे अति दूर॥*

इस दोहे में सामाजिक उत्तरदायित्व की भावना निहित है। व्यक्ति यदि समाज के लिए उपयोगी नहीं है, तो उसका बड़ा होना निरर्थक है। विनम्रता समाज में समानता और समरसता को बढ़ावा देती है।

4.4 मित्रता और सामाजिक सहयोग

रहीम के अनुसार मित्रता सामाजिक जीवन की महत्वपूर्ण कड़ी है। सच्ची मित्रता विश्वास, त्याग और सहयोग पर आधारित होती है। समाज में सहयोग की भावना जितनी प्रबल होगी, सामाजिक समरसता उतनी ही मजबूत होगी।

रहीम का काव्य व्यक्ति को यह सिखाता है कि मित्रता केवल स्वार्थ के लिए नहीं, बल्कि सामाजिक सहयोग और नैतिक समर्थन के लिए होनी चाहिए। यह दृष्टिकोण समाज को स्थायित्व प्रदान करता है।

4.5 मानव-मूल्यों का संवर्धन

रहीम के काव्य में मानव-मूल्य सामाजिक समरसता का मूल आधार हैं। सत्य, सहिष्णुता, संयम और उदारता उनके प्रमुख मूल्य हैं। वे मनुष्य को उसके कर्मों से पहचानने पर बल देते हैं, न कि उसके सामाजिक या धार्मिक परिचय से।

यह दृष्टिकोण सामाजिक भेदभाव को समाप्त करने की दिशा में महत्वपूर्ण है। रहीम का मानवतावाद समाज को अधिक न्यायपूर्ण और समरस बनाने की प्रेरणा देता है।

5. रहीम का मानवतावादी दृष्टिकोण

रहीम का काव्य मूलतः एक गहन मानवतावादी दृष्टिकोण से अनुप्राणित है। उनका मानवतावाद किसी संकीर्ण धार्मिक, जातीय या सामाजिक सीमा में बँधा हुआ नहीं है, बल्कि वह संपूर्ण मानव समाज को केंद्र में रखता है। रहीम के अनुसार मनुष्य का वास्तविक मूल्य उसकी मानवीय संवेदनाओं—जैसे प्रेम, करुणा, दया, सहिष्णुता, विनम्रता और परोपकार—से निर्धारित होता है, न कि उसकी सामाजिक हैसियत, शक्ति या धार्मिक पहचान से। यही विचार सामाजिक समरसता की वैचारिक आधारभूमि तैयार करता है।

रहीम के दोहे यह स्पष्ट करते हैं कि यदि व्यक्ति अपने आचरण में मानवीय मूल्यों को स्थान देता है, तो समाज में वैमनस्य और संघर्ष की संभावनाएँ स्वतः कम हो जाती हैं। वे अहंकार, स्वार्थ और कठोरता को मानवता के सबसे बड़े शत्रु मानते हैं। रहीम का मानवतावाद व्यक्ति को आत्मकेंद्रित दृष्टि से बाहर निकालकर समाज के प्रति उत्तरदायित्व का बोध कराता है। इस प्रकार उनका काव्य सामाजिक समरसता को केवल आदर्श रूप में नहीं, बल्कि व्यवहारिक जीवन-दृष्टि के रूप में प्रस्तुत करता है, जो समाज को जोड़ने वाली शक्तियों को सुदृढ़ करता है।

6. समकालीन समाज में रहीम की प्रासंगिकता

वर्तमान युग सामाजिक, धार्मिक और सांस्कृतिक स्तर पर अनेक चुनौतियों से घिरा हुआ है। जातीय भेदभाव, धार्मिक असहिष्णुता, आर्थिक असमानता और बढ़ता हुआ व्यक्तिगत स्वार्थ सामाजिक समरसता को कमजोर कर रहे हैं। ऐसे समय में रहीम का काव्य और उनका सामाजिक दृष्टिकोण अत्यंत प्रासंगिक प्रतीत होता है। उनके दोहे आज के समाज को आत्मचिंतन की दिशा में प्रेरित करते हैं और मानवीय मूल्यों की पुनर्स्थापना का मार्ग सुझाते हैं।

रहीम प्रेम, करुणा और विनम्रता को सामाजिक जीवन का आधार मानते हैं, जो आज के प्रतिस्पर्धात्मक और तनावपूर्ण वातावरण में और भी अधिक आवश्यक हो गए हैं। उनका काव्य सामाजिक संवाद, सहिष्णुता और आपसी सम्मान की भावना को प्रोत्साहित करता है। शिक्षा, सामाजिक सुधार और नैतिक विकास के क्षेत्र में रहीम के विचार समाज को अधिक मानवीय और संतुलित बनाने में सहायक हो सकते हैं। इस प्रकार कहा जा सकता है कि रहीम केवल अपने समय के कवि नहीं हैं, बल्कि उनका सामाजिक चिंतन आज के समाज के लिए भी समान रूप से मार्गदर्शक और प्रेरणादायक है।

7. निष्कर्ष

उपरोक्त विवेचन के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि रहीम सतसई सामाजिक समरसता का एक सशक्त और प्रेरणादायक साहित्यिक स्रोत है। रहीम के दोहे समाज को जोड़ने वाले तत्वों—प्रेम, करुणा, दया, विनम्रता और मानवता—को सरल किंतु प्रभावी ढंग से प्रस्तुत करते हैं। उनका काव्य व्यक्ति को आत्मकेंद्रित दृष्टि से बाहर निकालकर समाज-केंद्रित सोच की ओर अग्रसर करता है।

रहीम का दृष्टिकोण यह स्पष्ट करता है कि सामाजिक समरसता केवल बाहरी नियमों से नहीं, बल्कि व्यक्ति के आचरण और नैतिक मूल्यों से स्थापित होती है। आज के विघटनकारी सामाजिक परिवेश में रहीम के विचार सामाजिक संतुलन,

सौहार्द और मानवीय गरिमा की पुनर्स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। अतः रहीम का काव्य न केवल साहित्यिक दृष्टि से, बल्कि सामाजिक दृष्टि से भी अत्यंत मूल्यवान और प्रासंगिक है।

संदर्भ ग्रंथ

1. रहीम – *रहीम सतसई*, संपादित संस्करण, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज।
2. शुक्ल, रामचंद्र – *हिंदी साहित्य का इतिहास*, नागरी प्रचारिणी सभा, वाराणसी।
3. द्विवेदी, हजारीप्रसाद – *भक्ति आंदोलन और हिंदी साहित्य*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
4. मिश्र, शिवकुमार – *भारतीय समाज और साहित्य*, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली।
5. त्रिपाठी, रामविलास – *भारतीय संस्कृति और साहित्य*, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली।
6. वर्मा, रामकुमार – *संत काव्य की सामाजिक चेतना*, साहित्य भवन, इलाहाबाद।
7. पांडेय, रामनिवास – *मध्यकालीन हिंदी काव्य और समाज*, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज।
8. शर्मा, हरदेव – *हिंदी भक्ति काव्य: सामाजिक और नैतिक मूल्य*, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली।